

॥ श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ॥

अध्याय 11: विश्वरूपदर्शनयोग

1/4 (श्लोक 1-10), रविवार, 13 अगस्त 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: <https://youtu.be/nxx-fnng4Es>

भगवान द्वारा अर्जुन को अपना विश्वरूप दर्शन करवाना

ईश्वर वन्दना, शुभ द्वीप प्रज्वलन, गुरु वन्दना एवं भारत माता को नमन करते हुए श्रीमद्भगवद्गीता जी के हृदय रूपी एकादश अध्याय की विवेचना के सत्र का शुभारम्भ हुआ। यह हम सभी पर श्रीभगवान की असीम अनुकम्पा का परिणाम है कि हमें गीता जी के अध्ययन एवं विवेचन श्रवण करने का अवसर मिला है और हमें यह अवसर मिला कि हम श्रीमद्भगवद्गीता को पढ़ें, पढ़ाएं और अपने जीवन में लाने का प्रयास करें।

इस अध्याय से पहले विषाद ग्रस्त अर्जुन को श्रीभगवान ने उनके विषाद को समाप्त करने के लिए विस्तार से ज्ञान दिया और समस्त गुह्य गोपनीय ज्ञान बताया और समझाया। अपनी विभूतियों के बारे में भी बताया। सभी विभूतियों को बताने के उपरान्त यह भी बताया कि समस्त जगत अपने अंश मात्र से धारण करते हुए भी मैं जैसे के तैसे सिद्ध हूँ। परमात्मा का महात्म्य सुनने के उपरान्त अर्जुन के मन में विचार आया कि क्या ऐसे सर्वत्र व्याप्त परमात्मा का दर्शन मुझे प्राप्त हो सकता है। भगवान के विश्वरूप को देख सकूँ, क्या यह योग्यता मुझमें है? इन बातों पर विचार करते हुए उन्होंने भगवान से प्रश्न किया।

11.1

अर्जुन उवाच

मदनुग्रहाय परमं(ङ्), गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम्।
यत्त्वयोक्तं(म्) वचस्तेन, मोहोऽयं(म्) विगतो मम॥11.1॥

अर्जुन बोले - केवल मेरे पर कृपा करने के लिये ही आपने जो परम गोपनीय अध्यात्म - विषयक वचन कहे, उससे मेरा यह मोह नष्ट हो गया है।

विवेचन:- अर्जुन कहते हैं कि श्रीभगवान थोड़ी सी विनती करने पर ही, दया करके, प्रेमवश आपने मुझे अपने उस आत्मज्ञान के बारे में बताया जिसे प्राप्त करने में मनुष्य अपना एक जीवन ही नहीं अपितु असङ्ख्य जीवन लगा देते हैं। इस परमज्ञान को जानकर मेरा अज्ञान रूपी अन्धकार नष्ट हो गया है।

अर्जुन कहते हैं कि मैं गलत सोच रहा था। आप तो सारे विश्व के नियन्ता हैं। आप मेरे साथ मेरे सारथी बनकर बैठे हैं, परन्तु आप

कौन हैं, यह मुझे ज्ञात हो गया है। आपने मेरे अर्जुन होने का अभिमान नष्ट कर दिया और दुःस्वप्न से जाग्रत कर दिया है। अर्जुन मोह नष्ट होने की बात कहते हैं। अभी वह युद्ध करने की बात नहीं कर रहे हैं क्योंकि अभी भी उनकी आशङ्काओं का अन्त नहीं हुआ है।

11.2

**भवाप्ययौ हि भूतानां(म्), श्रुतौ विस्तरशो मया।
त्वत्तः(ख) कमलपत्राक्ष, माहात्म्यमपि चाव्ययम्॥11.2॥**

क्योंकि हे कमलनयन! सम्पूर्ण प्राणियों के उत्पत्ति तथा विनाश मैंने विस्तारपूर्वक आपसे ही सुने हैं और (आपका) अविनाशी माहात्म्य भी (सुना) है।

विवेचन:- अर्जुन ने श्रीभगवान को कमल पत्राक्ष (अर्थात् कमल पत्र के समान नेत्र वाले) कहकर सम्बोधित करते हुए कहा कि आपसे मैंने सृष्टि के निर्माण और विलय के बारे में विस्तार से सुना है। अर्जुन का मोह अब नष्ट हो गया है। उनका स्वयं होने का एवं अभिमान का ज्ञान समाप्त हो चुका है। अब वह उस ज्ञान को प्राप्त करने के पात्र बन चुके हैं जो परम ज्ञान है।

जब तक कोई पात्र खाली नहीं होता वह नवीन एवं शुद्ध ज्ञान से नहीं भर सकता है। अब अर्जुन उस परम ज्ञान को प्राप्त करने को लालायित हैं, उनकी तृष्णा अब बढ़ गई है। अर्जुन अब उस ज्ञान प्राप्त करने के लिए व्याकुल हैं।

वह अगले श्लोक में भगवान से कहते हैं-

11.3

**एवमेतद्यथात् त्वम्, आत्मानं(म्) परमेश्वर।
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपम्, ऐश्वरं(म्) पुरुषोत्तम॥11.3॥**

हे पुरुषोत्तम! आप अपने-आपको जैसा कहते हैं, यह (वास्तव में) ऐसा ही है। हे परमेश्वर! आपके ईश्वर-सम्बन्धी रूप को (मैं) देखना चाहता हूँ

विवेचन:- हे प्रभु! मुझमें आपके परमेश्वर रूप को देखने की प्रबल इच्छा जाग्रत हो गई है। अर्जुन कहते हैं कि जो मेरे सखा हैं, सारथी हैं, वे ही परमात्मा हैं, पुरुषोत्तम हैं और जो भी आपने अपने परमात्म रूप के बारे में कहा है वह सत्य है। मेरे मन में आपके ऐश्वर्य युक्त ईश्वरीय रूप को देखने की इच्छा जाग्रत हो गई है।

अर्जुन ऐसे स्थान पर आ चुके हैं जहाँ से उन्हें अब छलाङ्ग लगानी है। जैसे बरमूडा ट्राएङ्गल अपने समीप आने वाले को अपने में खींच लेता है इसलिए लोग उसके समीप जाने की हिम्मत नहीं कर पाते लेकिन अर्जुन में अब वह हिम्मत आ चुकी है। वह अब बिन्दु से सिन्धु बनने को तैयार है, मिटने को तैयार है। अर्जुन ने अपनी इच्छा तो प्रगट कर दी लेकिन यह भी विचार करते हैं कि उनमें इस रूप को देखने की योग्यता है भी या नहीं।

11.4

**मन्यसे यदि तच्छक्यं(म्), मया द्रष्टुमिति प्रभो।
योगेश्वर ततो मे त्वं(न्), दर्शयात्मानमव्ययम्॥11.4॥**

हे प्रभो! मेरे द्वारा (आपका) वह परम ऐश्वर रूप देखा जा सकता है - ऐसा अगर (आप) मानते हैं, तो हे योगेश्वर! आप अपने (उस) अविनाशी स्वरूप को मुझे दिखा दीजिये।

विवेचन:- अर्जुन कहते हैं, हे प्रभो! हे योगेश्वर! यदि आप मुझे इस योग्य समझते हैं, आप उचित समझते हैं तो आप अपने

अविनाशी विश्वरूप का दर्शन मुझे करा दीजिए। यहाँ अर्जुन के वाक्य कौशल से हमें ज्ञात होता है कि उन्होंने सीधे यह बात नहीं कही, अपितु विनती करते हुए अपनी इच्छा व्यक्त की।

गुरु जब जान जाते हैं कि उनका शिष्य उक्त ज्ञान ले सकता है तभी उसे वह ज्ञान देते हैं। अर्जुन ने अत्यधिक विनम्रता से उस विश्वरूप दर्शन को पाने के लिए अनुरोध किया है। सद्गुरु अपने शिष्य की पात्रता का आङ्गलन कर लेने पर और यह निश्चित करने के उपरान्त कि शिष्य की साधना पूर्ण हो चुकी है तब ही उसे ज्ञान देते हैं। यह अर्जुन भलीभाँति जानते हैं। अर्जुन को ऐसा लगता है कि भगवान मेरे साथ हैं और वे मुझे वह पात्रता प्रदान कर सकते हैं। वे तो अपात्र को भी पात्र बना सकते हैं इसलिए वह पूरे समर्पण के साथ याचना करते हैं। भगवान में अर्जुन की प्रीति ऐसी है कि अर्जुन कुछ माँगे और भगवान न प्रदान करें, यह सम्भव नहीं है।

11.5

श्रीभगवानुवाच
पश्य मे पार्थ रूपाणि, शतशोऽथ सहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि, नानावर्णाकृतीनि च॥11.5॥

श्री भगवान् बोले - हे पृथानन्दन! अब मेरे अनेक तरह के, और अनेक वर्णों (रंगों) तथा आकृतियों वाले सैकड़ों-हजारों अलौकिक रूपों को (तू) देख।

विवेचन:- श्रीभगवान् अर्जुन से बोले कि हे पृथानन्दन! तुम मेरे नाना प्रकार के अलग-अलग आकृतियों वाले, अनेक वर्णों वाले सैकड़ों-हजारों दिव्य रूपों को देखो।

अधिक विस्तार से हमें इस प्रसङ्ग को समझने के लिए पात्र के सीधा होने एवं खाली होने की महत्ता को समझना होगा। पात्र यदि सीधा नहीं होगा तो उसमें भरा गया द्रव्य रुक नहीं सकता और पात्र का खाली होना भी आवश्यक है। गुरु यही पात्रता सुनिश्चित करता है और एक प्रकार से मध्यस्थता का कार्य करता है।

अर्जुन ऐसा पात्र है और श्रीकृष्ण एक गुरु के रूप में, मध्यस्थ के रूप में श्रीभगवान् के विराट रूप को देखने के लिए उत्प्रेरक का काम करते हैं। भगवान् ने जब यह सुनिश्चित कर लिया कि अर्जुन अब पात्र बन गये तब ही उनकी इच्छा को पूर्ण करते हैं।

भगवान् अब अपनी कृपा बरसाने को तैयार हैं और कहते हैं, अर्जुन! देखो मेरे विराट स्वरूप को देखो।

11.6

पश्यादित्यान्वसूत्रद्रान्, अश्विनौ मरुतस्तथा।
बहून्यदृष्टपूर्वाणि, पश्याश्चर्याणि भारत॥11.6॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! तू बारह आदित्यों को, आठ वसुओं को, ग्यारह रुद्रों को (और) दो अश्विनीकुमारों को तथा उनचास मरुद्गणों को देख। जिनको तूने पहले कभी देखा नहीं, (ऐसे) बहुत-से आश्चर्यजनक रूपों को (भी) (तू) देख।

विवेचन:- श्रीभगवान् कहते हैं कि हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! अब तुम अदिति के बारह पुत्रों को, आदित्यों को, ऊर्जा के स्रोत आठ वसुओं को, ग्यारह रुद्रों को, सभी व्याधियों से मुक्त करने वाले सूर्य पुत्र दोनों अश्विनी कुमारों को, पचास मरुद्गणों को और ऐसे आश्चर्यजनक रूपों को भी देख लो जो कभी नहीं देखे हों।

यहाँ उल्लेखनीय है कि बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, आठ वसु एवं दो अश्विनी कुमारों का योग तैंतीस आता है। अर्थात् अपने सनातन ग्रन्थों में लिखे तैंतीस कोटि देवताओं का वर्णन इन रूपों का वर्णन ही है।

कोटि का भावार्थ करोड़ों से नहीं है अपितु कोटि का अभिप्राय "प्रकार" से है। पचास प्रकार की वायु का उल्लेख पुरातन ग्रन्थों में है, जिसमें से हमारे शरीर में ही पाँच प्रकार की वायु होती है। कभी-कभी इन वायु में असन्तुलन होने पर वात-रोग हो जाता है। आयुर्वेद में इनका उल्लेख है।

11.7

**इहैकस्थं(ञ) जगत्कृत्स्नं(म्), पश्याद्य सचराचरम्।
मम देहे गुडाकेश, यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि॥11.7॥**

हे नींद को जीतने वाले अर्जुन! मेरे इस शरीर के एक देश में चराचर सहित सम्पूर्ण जगत् को अभी देख ले। इसके सिवाय (तू और भी जो कुछ देखना चाहता है, (वह भी देख ले)।

विवेचन:- यहाँ भगवान अर्जुन को गुडाकेश नाम से सम्बोधित करते हैं। गुडाकेश का अर्थ निद्रा को जीतने वाला या निद्रा के स्वामी का है। भगवान कहते हैं कि हे गुडाकेश अर्जुन! तुम जाग्रत होकर, एकाग्र होकर मेरे असङ्ख्य रूपों को देखो। इसके अतिरिक्त तुम अन्य जो कुछ देखना चाहते हो, उन सबको और विश्व में जो कुछ भी देखना चाहो, वह मेरे शरीर में देख लो।

जब भगवान ने देख लिया कि अब अर्जुन स्थिर हैं, उनकी अपनी बाह्य दृष्टि समाप्त है, वह अन्तः करण की दृष्टि से देख सकते हैं, तब ही उन्हें वह दिव्य दृष्टि प्रदान कर दी, जिससे वह भगवान के विराट रूप को देख सकते हैं।

यह अन्तर्दृष्टि जब तक जाग्रत नहीं होती तब तक निराकार को नहीं देख सकते। दिव्य दृष्टि व्यक्ति को राधा बना देती है। निराकार, विराट रूप को देखने के लिए अन्तर्दृष्टि का खुलना आवश्यक है। जैसे अन्धकार में यदि आप कोई गाड़ी चला रहे हों और सामने से तेज प्रकाश चालक की आँखों पर पड़े तो सामने आती गाड़ी नहीं दिखाई देती। उसी प्रकार मन के अहङ्कार रूपी प्रकाश से अन्तःकरण में अन्धेरा छा जाता है। अन्दर का प्रकाश देखने के लिए अहङ्कार रूपी बाह्य प्रकाश का हटना आवश्यक है और अर्जुन का अब वह अहङ्कार हट चुका है और अन्तर्दृष्टि खुल चुकी है।

11.8

**न तु मां(म्) शक्यसे द्रष्टुम्, अनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं(न्) ददामि ते चक्षुः(फ्), पश्य मे योगमैश्वरम्॥11.8॥**

परन्तु (तू) इस अपनी आँख (चर्मचक्षु) से मुझे देख ही नहीं सकता, (इसलिये मैं) तुझे दिव्य चक्षु देता हूँ, (जिससे तू) मेरी ईश्वरीय सामर्थ्य को देख।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि अर्जुन अपने चर्मचक्षुओं से तुम मुझे देख नहीं सकते। वैसे हमारी दृष्टि के भी अनेक प्रकार हैं। एक हमारे चर्म चक्षुओं की दृष्टि, दूसरी प्रज्ञा दृष्टि। जब हमारी प्रज्ञा दृष्टि जाग्रत होती है तो उस शुद्ध बुद्धि से कुछ बातों का भान होता है जो सामान्य चक्षुओं से नहीं हो सकता। भगवान कहते हैं, इनमें से किसी भी दृष्टि से मुझे देखना सम्भव नहीं है इसलिये मैं तुम्हें दिव्य चक्षु प्रदान करता हूँ। इस दिव्य दृष्टि से ही तुम मेरे विराट रूप को देख पाओगे।

अर्जुन के अतिरिक्त सञ्जय को भी दिव्य दृष्टि मिली थी जो उनके गुरु महर्षि वेदव्यास जी ने उन्हें प्रदान की थी। सञ्जय उस दिव्य दृष्टि से भगवान के विराट रूप को देख सकते हैं और वे धृतराष्ट्र को सब बताते हैं।

11.9

सञ्जय उवाच

एवमुक्त्वा ततो राजन्, महायोगेश्वरो हरिः। दर्शयामास पार्थाय, परमं(म्) रूपमैश्वरम्॥11.9॥

सञ्जय बोले - हे राजन्! ऐसा कहकर फिर महायोगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को परम ऐश्वर विराट रूप दिखाया।

विवेचन:- सञ्जय धृतराष्ट्र से कहते हैं कि हे राजन्! सारे पापों को हरने वाले महायोगेश्वर भगवान ने ऐसा कहकर अर्जुन को अपना विराट रूप दिखाया। अर्जुन अब कुछ भी नहीं बोल रहे हैं, निःशब्द हो गये हैं, केवल देखे जा रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि भगवान ने पहले अपना विराट रूप दिखाया, विकराल रूप नहीं दिखाया। विकराल रूप यदि पहले दिखा देते तो सम्भव है कि अर्जुन मूर्छित हो जाते। भगवान ने अपना विश्वरूप जो विराट रूप भी है, अर्जुन को दिखलाया है।

11.10

अनेकवक्त्रनयनम्, अनेकाद्भुतदर्शनम्। अनेकदिव्याभरणं (न्), दिव्यानेकोद्यतायुधम्॥11.10॥

जिसके अनेक मुख और नेत्र हैं, अनेक तरह के अद्भुत दर्शन हैं, अनेक अलौकिक आभूषण हैं, हाथों में उठाये हुए अनेक दिव्य आयुध हैं (तथा) जिनके गले में दिव्य मालाएँ हैं, जो अलौकिक वस्त्र पहने हुए हैं, जिनके ललाट तथा शरीर पर दिव्य चन्दन, कुंकुम आदि लगा हुआ है, ऐसे सम्पूर्ण आश्चर्यमय, अनन्त रूपों वाले (तथा) सब तरफ मुखों वाले देव (अपने दिव्य स्वरूप) को भगवान् ने दिखाया। (11.10-11.11)

विवेचन:- श्रीभगवान ने जिस विश्वरूप को अर्जुन को दिखलाया, उसे सञ्जय भी देख रहे हैं, सञ्जय ने उसका वर्णन करते हुए धृतराष्ट्र को कहा कि जो मैं देख रहा हूँ, वह अद्भुत है, अत्यन्त ही आश्चर्यजनक है।

श्रीभगवान के अनेक मुख हैं और नेत्र हैं, अनेक तरह के अद्भुत दर्शन हैं। श्रीभगवान ने दिव्य अलङ्कार धारण किए हैं, अनेक दिव्य आयुधों को हाथों में उठा रखा है। श्रीभगवान ने गले में दिव्य वैजन्ती मालाएँ, अलौकिक वस्त्र धारण किये हैं। ललाट और शरीर पर दिव्य चन्दन, कुंकुम आदि का लेप लगा है। ऐसे सम्पूर्ण आश्चर्यजनक, अनन्त रूपों वाले और सब ओर मुखों वाले दिव्य रूप में दिखाई दे रहे हैं। सम्पूर्ण विश्व में मुझे उनका ही रूप दिखाई दे रहा है। वह रूप अनन्त है, उसका कोई अन्त नहीं हो सकता।

यह बहुत ही अद्भुत अध्याय है। अगर हमें अर्जुन की तरह श्रीमद्भगवद्गीता को समझना है तो उनकी तरह ही भगवान की शरण में जाना होगा। अर्जुन की भूमिका में जाकर हम भी उस रूप का अनुभव कर पाएँगे।

अर्जुन भगवान से कहते हैं कि मैं आपका शिष्य, आपके शरणागत हूँ। अगर हम सब भी ऐसे ही शरणागत हो जाँएँ तब ही हम उस रूप का कुछ अंश देख पाएँगे।

विवेचन समाप्त करने के उपरान्त प्रश्नोत्तर सत्र प्रारम्भ हुआ।

प्रश्नोत्तर-

प्रश्नकर्ता: बजरङ्ग भैया

प्रश्न 1: गीता जी के अनुसार आततायियों को कैसे मारना चाहिए?

उत्तर: चूँकि अर्जुन एक क्षत्रिय हैं और राजा भी हैं अतः आततायियों को समाप्त करना, मारना उनका धर्म है। जैसे सैनिक का धर्म है युद्ध करना और आततायियों को मारना। जिसका जो कार्य हो उसे उसी के अनुसार धर्म स्थापना का कार्य करना

चाहिए।

प्रश्नकर्ता: कुसुम दीदी

प्रश्न 2 : अनेक वक्त्र नयनम् समझाएँ।

उत्तर: वक्त्र का अर्थ है टेढ़ा-मेढ़ा और वक्त्र का अर्थ है चेहरा या मुख।

प्रश्नकर्ता: मीना दीदी

प्रश्न 3 : श्लोक छः में पश्य दित्यान की विवेचना?

उत्तर: इसमें बारह आदित्यों के विवरण के विषय में बताया है। अदिती के बारह पुत्रों को यहाँ आदित्य कहा गया है।

प्रश्न : श्लोक दशम् में आयुध का उल्लेख है इसे समझाएँ?

उत्तर: आयुधों का अर्थ अस्त्र - शस्त्र है। जिसे हाथों में पकड़ कर चलाएँ वह शस्त्र, जैसे तलवार, गदा इत्यादि और हाथ से छूट कर चले वह अस्त्र होता है, जैसे भाला, धनुष-बाण इत्यादि।

प्रश्नकर्ता : मीना दीदी

प्रश्न 4 : क्या हम भी गीता जी को आप की तरह समझ सकते हैं, विवेचना कर सकते हैं? जबकि अब मैं वृद्धावस्था में आ गई हूँ।

उत्तर : हम अपने पूर्व जन्म के कृत्य और इस जन्म के कृत्य एवं भगवत् कृपा से ही ऐसा अवसर पा सकते हैं। कृपा पाने के लिए एक क्षण ही काफी है। जीवन के एक पल में ही कृपा बरस सकती है, उसका आयु से कोई सम्बन्ध नहीं है। हम में वह प्यास होनी चाहिए, भगवान के लिए वह तड़प आनी चाहिए, भगवान की कृपा कभी भी बरस सकती है, उसका आयु से कोई लेना देना नहीं है। मन से उसे माना है तो मन से ही उसे जानने का भाव आना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : भारती दीदी

प्रश्न 5 : छठे श्लोक के दूसरे चरण को एवं द्वितीय श्लोक के प्रथम चरण को पुनः समझाएँ।

उत्तर- षष्ठ श्लोक के दूसरे चरण में बहून्य का अर्थ है बहुत से एवं पूर्वाणि का अर्थ पहले से है। भगवान कहते हैं कि जो पहले अदृश्य थे उन दृश्यों को देख। भगवान अर्जुन को उसकी उत्कण्ठा को शान्त करने के लिए अपना सभी विराट रूप, आश्चर्यजनक रूप सभी कुछ दिखा देना चाहते हैं।

दूसरे श्लोक के पहले चरण में अर्जुन भगवान से उनके कभी भी नष्ट न होने वाले महात्म्य को विस्तार से सुनाने का आग्रह करते हैं। साधारण मनुष्यों की महत्ता कुछ काल तक रहती है किन्तु श्रीभगवान का महात्म्य अव्यय है, अविनाशी और सनातन है।

प्रश्नकर्ता : भारती दीदी

प्रश्न 6 : काम, क्रोध इत्यादि में क्रोध कम नहीं हो पाता, उसे कैसे कम करें?

उत्तर : काम, क्रोध, मद, लोभ सभी को कम करना कठिन है लेकिन काम अर्थात् कामना को कम करना सबसे कठिन है और

वह सारे विकारों की जननी भी है। निरन्तर प्रयास से यह कम हो सकते हैं। प्रति दिन योग अभ्यास करें, प्रणायाम करें, धारणा का प्रयास करें। धारणा का अर्थ मन के अन्दर चलने वाली क्रिया है। मन को शून्य बनाने का कार्य धारणा का अभ्यास ही करता है। हमें केवल दृष्टा भाव से प्रेक्षक बन कर देखना है, संवेदना और प्रतिक्रिया से विलग होना है।

हम इसे एक फार्मूले के अनुसार सरल भाषा में ए.सी. और बी. सी. के नाम से याद कर सकते हैं और प्रतिदिन देख सकते हैं। ए.सी. का अर्थ है **anger control** और बी.सी. का अर्थ है **भगवत् चिन्तन**। हम प्रतिदिन दृष्टा भाव से अपना आङ्गलन करें। आज कितना क्रोध आया और कितना भगवत् चिन्तन किया? मन चञ्चल होता है लेकिन अभ्यास करते रहने से वह नियन्त्रित हो जाता है।

कभी-कभी हमसे वह अद्भुत कार्य हो जाते हैं जो हमारी साधारण क्षमताओं से अधिक होता है, इसे हमें केवल एक निमित्त मान कर देखना चाहिए, कार्य कराने वाला भगवान होता है, सद्गुरु होता है, हम केवल एक माध्यम होते हैं, जब हम इस भाव से देखेंगे तो अभिमान, काम आदि का जन्म नहीं होगा और विकारों की उत्पत्ति नहीं होगी।

अन्त में प्रार्थना और धन्यवाद ज्ञापन के उपरान्त विवेचन सत्र समाप्त हुआ और मधुर हनुमान-चालीसा का पाठ आयोजित हुआ और सत्र समाप्त हुआ।



हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

<https://vivechan.learngeeta.com/feedback/>

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

<https://gift.learngeeta.com/>

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करें।

<https://vivechan.learngeeta.com/>

॥ गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ॥

॥ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥